THE TIMES OF INDIA

Date:12-08-21

Quotas Solve Little

Reservations have morphed into a populist exercise to deal with a jobs crisis. This will not help

TOI Editorials

The Lok Sabha was adjourned sine die on Wednesday, the outcome of an unproductive monsoon session. Well, not quite. On August 10, in an extraordinary show of unanimity, the Constitution (127th Amendment) Bill was passed. Everyone was in favour of it. That's because if there is one subject that can persuade all the political parties to make common cause, it's reservations. The bill's aim is to negate the outcome of a Supreme Court judgment in May which said that only GoI can identify OBC groups to benefit from reservation. All political parties agree that states too should have the right to pick beneficiaries.

Debates swirling around reservations, particularly for OBCs, are the focal point of the failures of Indian politics. What started off as affirmative action to level the playing field has morphed into a populist exercise that no political party can resist. Consequences may be grave as the contemporary push to expand reservations are misguided attempts to solve India's problem of a jobs crisis. Consider the data. Even as the drive for expanding the reserved share of jobs – be it on the basis of caste, economic vulnerability or domicile – grows, the number of jobs are shrinking. GoI data shows that in 2012, 79 ministries collectively employed 3 million people. By 2020, the number had shrunk to 1.8 million. As a consequence, the absolute number of jobs held by every category declined.

The story is no different in the private sector. India's youth population increased by about 72 million between 2004-05 and 2018-19. During the same period, young Indians in active work declined by about 25 million to an aggregate 138 million. As the young left agriculture, the other sectors were unable to create enough jobs. This is the backdrop to which the political response has been to find economic answers through the prism of identity.

The outcome of this populism is a weakening of the idea of common citizenship. Opportunities will be determined by identity and individual rights will be relegated. A related problem is this is a route without an end in sight. Relegating individual effort to group identity spawns narrower and narrower ways of looking at the world. Thus, the political backing for sub-categorisation of OBCs and SCs – since there will always be a group that believes it's been unfairly treated. A nation is greater than the sum of its parts. India's political class is forgetting it.

THE ECONOMIC TIMES

Date:12-08-21

Ridding Politics of Crime, Criminals

Voters' democratic sensibility holds the key

ET Editorial

We share the Supreme Court's concern over an increasing tendency for elected representatives to have a string of criminal cases tagged on to them, but we do not share its optimism that politics can be rid of crime and criminals through institutional reform. Good sense among voters is the ultimate guardian of democracy. Minus that, no institutional measure is likely to be of avail, except fast-track courts for people in public life.

Speedy prosecution of people in politics would deter actual criminals and protect those facing false cases. This would amount to treating politicians as a special category and seemingly violate the constitutional guarantees of equality and against discrimination. Elected representatives in legislatures represent all the people. To the extent that someone is being prosecuted in her capacity as an MP or an MLA who legislates on behalf of all the people, it entails no discrimination or privilege. Of course, the legislator in her individual capacity could be getting a privilege or being discriminated against (depending on whether what is going to be established is innocence or guilt) by being prosecuted faster, but that is incidental to and subsumed in the public good achieved by prosecuting the people's representative. Having charges framed against someone is no guide to actual culpability. In the recent past, only 3% of those prosecuted for sedition have been found guilty. Conflating charges such as unlawful assembly or disturbing the peace that are attracted by holding protest demonstrations with charges of rape and plunder would be a mistake. Voters, and not courts, have to exercise discernment as to who is fit to represent them.

We have MPs who hail Gandhi's assassin. We have MPs who look out for the interests of certain industrial houses. A democracy is only as good as the refinement of its people's democratic sensibility. What failure to develop that can result in is evident in incidents such as the storming of the Capitol in the US. Political parties must compete to enhance that sensibility.

दैनिक जागरण

Date:12-08-21

कोरोना के बाद की वैश्विक अर्थव्यवस्था

भरत झुनझुनवाला, (लेखक आर्थिक मामलों के जानकार हैं)

अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष यानी आइएमएफ द्वारा प्रकाशित फाइनेंस एंड डेवलपमेंट पत्रिका में यूरेशिया ग्रुप के प्रमुख इयान ब्रेमर का कहना है कि कोरोना संकट के बाद वैश्वीकरण की मुहिम को झटका लगेगा। कोरोना के बाद दुनिया में

वैश्वीकरण के बजाय राष्ट्रीयकरण अधिक होगा। इसे उन्होंने 'डी ग्लोबलाइजेशन' की संज्ञा दी है। अब तक विचार था कि छोटी बचत के लिए भी एक देश से दूसरे देश माल को ले जाना लाभप्रद होता है। कोरोना संकट ने ऐसे व्यापार को कठिन बना दिया है। यदि किसी देश में संकट पैदा हो गया और उस देश से माल की आपूर्ति बंद हो गई तो खरीदने वाले देश को कच्चा माल मिलना बंद हो जाता है। जैसे भारत के दवा उद्योग द्वारा चीन से कच्चा माल खरीदा जाता है। इस कच्चे माल को भारत के उद्यमी स्वयं भी बना सकते हैं, लेकिन चीन से खरीदना उन्हें सस्ता पड़ता है। ब्रेमर का कहना है कि आने वाले समय में उद्यमी अपने देश में ही कच्चा माल बनाना पसंद करेंगे, जिससे उनका धंधा दूसरे देश के संकट के कारण बाधित न हो। इसके विपरीत विश्व व्यापार संगठन यानी डब्ल्यूटीओ प्रमुख ओकोंजो इवेला ने कहा है कि कोरोना के समय विश्व व्यापार में जो अवरोध उत्पन्न हो गए हैं, उन्हें दूर कर विश्व व्यापार को पुन: पटरी पर लाना चाहिए। उनका उद्देश्य ही वैश्विक व्यापार को बढ़ाना है। इसके बरक्स ब्रेमर का यह कहना ज्यादा सही लगता है कि उत्पादन का राष्ट्रीयकरण बढ़ेगा। आइएमएफ की इसी पत्रिका में ही मैकेंजी ग्लोबल के प्रमुख जेम्स मनीइका ने कहा है कि माल के उत्पादन का राष्ट्रीयकरण होगा, जबकि सूचना का वैश्वीकरण और तेजी से होगा। यदि किसी देश में कोरोना संक्रमण बढ़ जाता है तो उससे माल की आवाजाही में अवरोध पैदा हो सकता है, लेकिन डाटा का व्यापार सुचारु रूप से चलता रहेगा। उनका यह आकलन सही प्रतीत होता है।

भविष्य में माल के उत्पादन का राष्ट्रीयकरण होगा, जबकि आनलाइन शिक्षा, डाक्टर से आनलाइन परामर्श, साफ्टवेयर जैसी सेवाओं का विश्व व्यापार बढ़ेगा। इस पृष्ठभूमि में भारत सरकार को 400 अरब डालर की वस्तुओं के निर्यात के अपने लक्ष्य पर पुर्निवचार करना चाहिए। यदि वैश्विक स्तर पर माल के व्यापार का राष्ट्रीयकरण होने की संभावना है तो हमें निर्यात केंद्रित बनने की तरफ बढ़ने से बचना चाहिए। यह सही है कि हालिया दौर में हमारे निर्यात कोरोना पूर्व स्तर पर आ गए हैं, लेकिन इसमें भारी वृद्धि की संभावनाएं नहीं दिखतीं। भारत के पास शिक्षित लोगों की भारी उपलब्धता है। माल के उत्पादन में उन्हें रोजगार उपलब्ध कराना कठिन होता जाएगा, क्योंकि कोरोना संक्रमण के कारण आटोमेटिक मशीनों का उपयोग बढ़ेगा। कई उद्योगों ने अपने श्रमिकों के लिए फैक्ट्रियों में ही रहने और भोजन की व्यवस्था की है। श्रम का मूल्य लगातार बढ़ रहा है। इसलिए यदि भारत सरकार के मंतव्य के अनुसार निर्यात बढ़ भी जाएं तो भी उससे नागरिकों को पर्याप्त रूप से रोजगार मिलना कठिन ही रहेगा। इसके विपरीत युवाओं को सेवाओं के निर्यात में उन्मुख करना कहीं ज्यादा आसान है। इससे सेवाओं का निर्यात भी बढ़ेगा और कोरोना का खतरा भी टलेगा। ऐसे में सरकार को वर्तमान डब्ल्यूटीओ संधि को निरस्त कर नई संधि के लिए वैश्विक मुहिम चलानी चाहिए।

वर्तमान में जिन वस्तुओं के व्यापार का संकुचन हो रहा है, वे डब्ल्यूटीओ के दायरे में हैं और जिन सेवाओं का विस्तार होने की संभावना है, वे डब्ल्यूटीओ के दायरे से बाहर हैं। इसलिए सरकार को विश्व समुदाय के समक्ष कहना चाहिए कि डब्ल्यूटीओ की वर्तमान संधि अप्रासंगिक होती जा रही है। इसके स्थान पर सेवाओं के निर्यात की एक नई संधि की जानी चाहिए।

डब्ल्यूटीओ संधि लागू होने से पहले भारत समेत कई देशों में प्रक्रिया यानी 'प्रोसेस' पेटेंट की व्यवस्था थी। आविष्कार करने वाले व्यक्ति को किसी माल या 'प्रोडक्ट' पर पेटेंट नहीं दिया जाता था। आविष्कार करने वाले को केवल उस विशेष प्रोसेस का पेटेंट दिया जाता था, जिससे उसने कोई नया प्रोडक्ट बनाया हो। जैसे फाइजर कंपनी ने कोविड का टीका बनाया। पूर्व के हमारे प्रोसेस पेटेंट के अंतर्गत भारत की कोई भी कंपनी किसी दूसरे प्रोसेस से ऐसा टीका बनाने के लिए स्वतंत्र थी, लेकिन डब्ल्यूटीओ संधि के अंतर्गत उस टीके पर ही पेटेंट दे दिया गया। यानी कोविड के ऐसे टीके को किसी दूसरे प्रोसेस से बनाने की छूट अन्य लोगों को नहीं रह गई। परिणामस्वरूप टीका उपलब्ध होने में देर हुई। इसकी कीमत

मानवता को चुकानी पड़ी। इसलिए समय आ गया है कि हम डब्ल्यूटीओ संधि के अंतर्गत प्रोडक्ट पेटेंट व्यवस्था को निरस्त करने की मांग उठाएं। अपने देश में जिन दवाओं के उत्पादन का पिछली सदी के आठवें-नौवें दशक में जो विस्तार हुआ, वह प्रोसेस पेटेंट के कारण ही संभव हो सका था। दूसरी कंपनियों द्वारा खोजी गई दवाओं को भारतीय उद्यमियों ने दूसरे प्रोसेस से बनाकर विश्व बाजार में सस्ते में उपलब्ध कराया। इसलिए डब्ल्यूटीओ की मौजूदा व्यवस्था पर पुनर्विचार आवश्यक है।

सेवाओं के निर्यात में बन रही संभावनाओं को भुनाने के लिए हमें विशेष प्रयास करने होंगे। अंग्रेजी और कंप्यूटर शिक्षा पर भी ध्यान केंद्रित करना होगा। अंग्रेजी के विरोध में तर्क दिया जाता है कि उससे हमारी संस्कृति खतरे में पड़ जाएगी। मैं इस तर्क से सहमत नहीं हूं। पहले सिंधु घाटी की भाषा थी, जिसे अभी तक पढ़ना संभव नहीं हो पाया। उसके बाद प्राकृत भाषा आई और फिर देवनागरी, लेकिन हमारी संस्कृति की निरंतरता बनी रही। इसके अतिरिक्त यदि हमें अपनी संस्कृति का वैश्वीकरण करना है तो अंग्रेजी अपनानी ही होगी। आज पश्चिमी देशों ने लैटिन भाषा को पकड़ नहीं रखा है। वे अंग्रेजी में आगे बढ़ गए और लैटिन में उपलब्ध संस्कृति को भी संजोये हुए हैं। इसलिए हमें प्रयास करना चाहिए कि अपनी संस्कृति को अंग्रेजी भाषा में सही रूप में प्रस्तुत करें, जिससे हम अंग्रेजी आधारित सेवाओं का भारी मात्रा में विस्तार कर सकें और साथ ही अपनी संस्कृति की रक्षा भी कर सकें। बेहतर हो कि सरकार 400 अरब डालर के माल निर्यात का लक्ष्य बनाने के स्थान पर 4,000 अरब डालर सेवाओं के निर्यात का लक्ष्य निर्धारित करे। कोरोना के बाद की वैश्विक अर्थव्यवस्था के लिए तैयारी अभी से करनी चाहिए।

जनसत्ता

Date:12-08-21

अपराधी की जगह

संपादकीय

राजनीति में आपराधिक पृष्ठभूमि वाले लोगों की बढ़ती दखल पर नकेल कसने के लिए सर्वोच्च न्यायालय ने दो बड़े सख्त आदेश दिए हैं। पिछले साल फरवरी में अदालत ने कहा था कि राजनीतिक दलों को अखबारों में छपवा कर और अपनी वेबसाइट के होम पेज, ट्विटर हैंडल और अन्य संबंधित मंचों पर यह स्पष्टीकरण देना होगा कि उन्होंने आपराधिक पृष्ठभूमि वाले कितने लोगों को टिकट दिया और क्यों दिया है। उन्हें हर उम्मीदवार का आपराधिक ब्योरा देते हुए यह भी बताना होगा कि उन्हें चुनाव लड़ाना क्यों उचित समझा। क्या उससे बेहतर कोई उम्मीदवार उन्हें नहीं मिला। जाहिर है, यह आदेश राजनीतिक दलों को असहज करने वाला था और कयास लगाए जा रहे थे कि वे इसकी अनदेखी करेंगे। वही हुआ। बिहार विधानसभा चुनाव में लगभग सभी दलों ने अपने प्रत्याशियों के आपराधिक विवरण नहीं दिए। इसे सर्वोच्च न्यायालय ने अवमानना करार देते हुए आठ राजनीतिक दलों पर भारी जुर्माना लगाया है। इसके अलावा अदालत ने दूसरा फैसला सुनाया है कि अब कोई भी राज्य सरकार किसी प्रतिनिधि के खिलाफ चल रहा कोई भी आपराधिक मुकदमा, बिना उच्च न्यायालय की अनुमति के, खुद वापस नहीं ले सकती। ये दोनों फैसले देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था में मील का पत्थर साबित हो सकते हैं, अगर इन पर कड़ाई से अमल किया हो।

पिछले कुछ दशकों से राजनीति में आपराधिक छवि वाले लोगों की संख्या लगातार बढ़ती गई है। शायद ही कोई राजनीतिक दल है, जिसमें ऐसे नेता न हों, जिन पर संगीन आपराधिक मामले दर्ज न हों। पार्टियां दूरी बनाने के बजाय बाहें खोल कर उनका स्वागत करती देखी जाती हैं। यही वजह है कि हर लोकसभा और विधानसभा में चुनाव के बाद ऐसी छवि वाले लोगों की संख्या कुछ बढ़ी हुई ही दर्ज होती है। स्वाभाविक ही इसे लेकर लोगों में असंतोष है वे इस प्रवृत्ति पर रोक लगाने के लिए अक्सर निर्वाचन आयोग की तरफ आंखें लगाए रहते हैं। मगर वहां से कोई उत्साहजनक प्रतिक्रिया नहीं मिल पाई। इसलिए सर्वोच्च न्यायालय की सख्ती से लोगों को लोकतांत्रिक प्रक्रिया में शुचिता की उम्मीद स्वाभाविक रूप से बढ़ गई है। अदालत ने सख्त टिप्पणी की है कि अब देश का धीरज जवाब दे रहा है। उसने कहा है कि पार्टियां

अपने प्रतिनिधियों का आपराधिक ब्योरा तुरंत प्रस्तुत करें, जिसमें उनके अपराध की प्रकृति, उन पर चल रही सुनवाई आदि का स्पष्ट उल्लेख हो।

लोकतंत्र में मतदाता को अपने प्रतिनिधि के बारे में जानने का पूरा हक है। इसी के मद्देनजर निर्वाचन आयोग ने अलग-अलग समय पर उम्मीदवारों के व्यक्तिगत विवरण में कई बार नई जानकारियां मांगी हैं। हालांकि चुनाव के लिए पर्चा दाखिल करते समय अब हर उम्मीदवार को अपनी संपत्ति, कमाई और आपराधिक मामलों का भी ब्योरा देना पड़ता है। मगर अक्सर ज्यादातर लोग उसमें अधूरी, भ्रामक और गोलमोल जानकारियां पेश करके खानापूर्ति करते देखे जाते हैं। अब राजनीतिक दलों की जवाबदेही होगी कि वे बताएं कि उन्होंने एक आपराधिक पृष्ठभूमि वाले व्यक्ति को क्यों उम्मीदवार बनाया। इस तरह शायद वे ऐसी छवि के लोगों को टिकट देने से हिचकेंगी। सर्वोच्च न्यायालय ने सख्त लहजे में कहा है कि ऐसी पृष्ठभूमि के लोगों को कानून बनाने का कोई अधिकार नहीं है। मगर जिस तरह राजनीतिक दलों में बाहुबल और धनबल से वोट हथियाने की प्रवृत्ति जड़ जमा चुकी है, वे किस हद तक इससे मुक्त हो पाएंगे, देखने की बात है। अगर वे सचमुच लोकतांत्रिक मूल्यों में विश्वास करते हैं, तो राजनीतिक दलों को इस पर अपनी अंतरात्मा को टटोलने की जरूरत है।

राष्ट्रीय सहारा

Date:12-08-21

माननीयों के मुकदमे

संपादकीय

राजनीति के अपराधीकरण पर सुप्रीम कोर्ट अक्सर चिंता जाहिर करता रहा है। अदालत ने इस बाबत गाहे बगाहे बेहद सख्त टिप्पणियां भी की हैं लेकिन मामला विधायिका का होने के कारण मामले में लाचारी ही हाथ लगती है। मंगलवार को मामले पर सुनवाई करते हुए ऐसा लगता है कि शीर्ष अदालत ने राजनीतिक दलों और माननीयों के पेंच ठीक से कस दिए हैं। कोर्ट का कहना कि, 'हमारे पास अब शब्द नहीं हैं। सब कुछ कह चुके हैं,जो कह सकते थे। हमें बताया गया कि सरकार सांसदों और विधायकों पर चल रहे मुकदमों को पूरा करने के बारे में गंभीर है, लेकिन कुछ भी नहीं किया गया।' कोर्ट के गंभीर रुख को बयां करता है। कोर्ट ने बिहार में हुए विधानसभा चुनाव में उम्मीदवारों के आपराधिक रिकार्ड़ का ब्योरा नहीं देने पर भाजपा सहित आठ दलों पर जुर्माना लगा दिया। भाजपा के अलावा इन दलों में एनसीपी, सीपीएम, कांग्रेस, जद यू, आरजेड़ी, लोजपा और भाकपा हैं। कोर्ट का यह कहना कि भाजपा और कांग्रेस दोनों ही प्रमुख दल राजनीति के अपराधीकरण का विरोध करते हैं, लेकिन चुनावों में दोनों आपराधिक रिकार्ड़ वाले प्रत्याशी उतारते हैं, आंखें खोल देने के लिए काफी है। राज्य सरकारों की शक्तियों पर अंकुश लगाते हुए शीर्ष अदालत ने सांसदों, विधायकों के खिलाफ आपराधिक मामले हाईकोर्ट की मंजूरी के बिना वापस लेने पर रोक लगा दी। कोर्ट ने सांसदों और विधायकों के खिलाफ चल रहे आपराधिक मामलों की निगरानी के लिए विशेष पीठ गठित करने के संकेत भी दिए। कोर्ट ने साथ ही विभिन्न सरकारें को चेताया कि वे येन केन प्रकारेण चुनाव जीतने के लिए राजनीतिक व अन्य असंगत कारणों से पूर्व

तथा वर्तमान सांसदों और विधायकों के खिलाफ चल रहे आपराधिक मुकदमे वापस नहीं ले सकते। उल्लेखनीय है कि उत्तर प्रदेश और कर्नाटक ने ऐसे अनेक मुकदमों को वापस लेने की अर्जी लगाई हैं, जिनमें सांप्रदायिक दंगों के अभियुक्त और विधायक शामिल हैं। मामले में अभी भी एक पेंच फंसता है, सुप्रीम कोर्ट का यह कहना कि सीआरपीसी की धारा 321 के तहत राज्य सरकार को मुकदमे वापस लेने का अधिकार है, लेकिन इसका उपयोग जनहित में ही किया जा सकता है, राज्य सरकारो की ढाल बन जाता है, लेकिन कोर्ट का यह कहना कि हम कानून बनाने वालो की अंतरात्मा से अपील करते हैं कि कुछ करें, लगता है कि जल्द ही रंग लाएगा और सरकार कुछ सार्थक तथा ठोस उपाय करेगी।

Date:12-08-21

एफड़ीआई की संभावनाएं

संपादकीय

भारत में प्रत्यक्ष विदेशी पूंजी निवेश (एफड़ीआई) में इजाफे की खासी संभावनाएं हैं। ईज ऑफ डूईंग बिजनेस जैसे कारोबारी अनुकूल उपायों से भारत को एफड़ीआई के माकूल गंतव्य माना जाने लगा है। अमेरिका-भारत रणनीतिक एवं भागीदारी मंच (यूएसआईएसपीएफ) ने हाल में एक उत्साहवर्धक निष्कर्ष निकाला है। यह कि भारत पांच अरब ड़ॉलर की अर्थव्यवस्था बन सकता है बशर्ते यहां सालाना 100 अरब ड़ॉलर की एफड़ीआई पहुंचे । अभी भारत की अर्थव्यवस्था का आकार 2,700 अरब ड़ॉलर है। बेशक, इतनी ज्यादा मात्रा में एफड़ीआई भारत आकर्षित कर सकता है, लेकिन इससे पहले जमीनी हालात भी देख लेने होंगे। देखना पड़ेगा कि भारत में ढांचागत आधार कितना मजबूत है। क्या इतना है कि विदेशी निवेशक सहज ही अपनी पूंजी भारत में लाना चाहें। सड़को , हवाई अड्ड़ों, बंदरगाह, कंटेनर ड़िपो, गोदाम आदि से जुड़े आधार मजबूत और बेहतर होने चाहिए। देखना होगा कि ईज ऑफ डूईंग के हालात बनिस्बत बेहतर होने के बावजूद लालफीताशाही से अभी भी छुटकारा नहीं मिल सका है। सड़के , कुछ राजमार्गों को छोड़कर, भी कोई बेहतर स्थिति में नहीं हैं। परियोजनाओं में राजनीतिक दखल भी नहीं नकारा जा सकता। कहना यह कि विदेशी निवेशकों को आश्वस्त करने की स्थिति में भारत नहीं है। हालांकि कुछ आर्थिक संकेतक जरूर देश में आर्थिक स्थितियों के उत्तरोत्तर

सुधरने के संकेत दे रहे हैं। निर्यात के मोर्चे पर बेहद उत्साहजनक परिणाम मिल रहे हैं। वाणिज्य मंत्रालय के मुताबिक, एक ही हफ्ते में देश के निर्यात में 50 फीसद की वृद्धि हुई है। इंजीनियरिंग सामान, रत्न एवं आभूषण का निर्यात अच्छा रहने से कुल निर्यात एक से सात अगस्त के दौरान यानी मात्र एक सप्ताह में 50.48 फीसद बढ़कर 7.41अरब ड़ॉलर पर पहुंच गया है। कोरोना महामारी से समूची दुनिया पार पाने में जुटी है। भारत इस दौरान चिकित्सा उपकरण, दवाओं और टीकों के उत्पादन में खासी बढ़त ले सकता है। भारत में टीका उत्पादन का मजबूत आधार मौजूद है। अमेरिकी संस्था ने भी ध्यान दिलाया है कि भारत बनिस्बत कम लागत पर टीकों का निर्माण करके निर्यात बढ़ा सकता है। जरूरत है कि भारत अनुकूल स्थिति और माकूल माहौल का फायदा उठाए।

Date:12-08-21

धरती का संकट, बढ़ती चुनौतियां

भारत ड़ोगरा

इक्कीसवीं शताब्दी में पहले से कहीं गंभीर चुनौतियां मानवता के सामने हैं। मात्र एक वाक्य में इस शताब्दी को परिभाषित करना है तो यह धरती पर जीवन के अस्तित्व मात्र के लिए संकट उत्पन्न होने की शताब्दी है।

विश्व में 'डूमस्डे क्लॉक' अपनी तरह की प्रतीकात्मक घड़ी है, जिसकी सुइयों की स्थिति के माध्यम से दर्शाने का प्रयास किया जाता है कि विश्व किसी बहुत बड़े संकट की संभावना के कितने नजदीक है। इस घड़ी का संचालन 'बुलेटिन ऑफ अटॉमिक साइंटिस्ट्स' नामक वैज्ञानिक संस्थान द्वारा किया जाता है। इसके परामर्शदाताओं में 15 नोबल पुरस्कार विजेता भी हैं। सब मिलकर प्रति वर्ष तय करते हैं कि इस वर्ष घड़ी की सुइयों को कहां रखा जाए। घड़ी में रात के 12 बजे को धरती पर बड़े संकट का पर्याय माना गया है। घड़ी की सुइयां रात के 12 बजे के जितने नजदीक रखी जाएंगी, उतनी ही किसी बड़े संकट से धरती (व उसके लोगों और जीवों) के संकट की स्थिति मानी जाएगी। 2020-21 में इन सुइयों को (रात के) 12 बजने में 30 सेकेंड़ पर रखा गया है। संकट के प्रतीक १२ बजे के समय से इन सुइयों की इतनी नजदीकी कभी नहीं रही। दूसरे शब्दों में, घड़ी दर्शा रही है कि इस समय धरती किसी बड़े संकट के सबसे अधिक नजदीक है।

'डूमस्डे घड़ी' के वार्षिक प्रतिवेदन में इस स्थिति के तीन कारण बताए गए हैं। पहला, जलवायु बदलाव के लिए जिम्मेदार जिन ग्रीनहाऊस गैसों के उत्सर्जन में वर्ष 2013-17 के दौरान ठहराव आ गया था, उनमें 2018 में फिर वृद्धि दर्ज की गई। दूसरा, परमाणु हथियार नियंत्रित करने के समझौते कमजोर हुए हैं। आईएनएफ समझौते का नवीनीकरण नहीं हो सका। तीसरा, सूचना तकनीक का दुरुपयोग हो रहा है, जिसका सुरक्षा पर भी प्रतिकूल असर पड़ रहा है। इन तीन कारणों के मिले-जुले असर से आज विश्व बड़े संकट की संभावना के अत्यधिक नजदीक है। संकट को कम करने के लिए जरूरी कदम तुरंत उठाने होंगे। स्पष्ट है कि जीवन के अस्तित्व को खतरे में डालने वाले खतरों को असहनीय हद तक बढ़ने दिया गया है, और यही इस समय विश्व की विकट समस्या है। संकटग्रस्त विश्व में मुख्य उम्मीद तो विश्व में जनशक्ति के ऐसे उभार से ही रह जाती है, जो संकीर्ण विभाजनों से ऊपर उठ कर भावी पीढ़ियों के जीवन की रक्षा के आवश्यक कार्य में स्वयं को समर्पित करे। विश्व में विभिन्न महत्वपूर्ण मुद्दों पर हजारों सामाजिक संगठन, जन-अभियान सक्रिय

हैं। सार्थक मांगों पर अनेक आंदोलन उन्होंने किए हैं, तो बहुत से रचनात्मक कार्य भी किए हैं। अनेक अभियान चलाए गए हैं। कई मामलों में बड़ी सफलता प्राप्त की हैं, तो कई प्रयास अधूरे हैं। चाहे सफलता कम मिली हो या अधिक, पर सच्चाई यह है कि जो नई चुनौतियां सामने आ रही हैं, वे अभी तक के प्रयासों की तुलना में कहीं बड़ी चुनौतियां हैं।

इस स्थिति में जन-संगठनों व आंदोलनों के लिए बड़ा सवाल है कि जो महवत्पूर्ण कार्य वे पहले से कर रहे हैं, उन्हें जारी रखते हुए नई सबसे बड़ी चुनौतियों का सामना कैसे करें। इस समय विभिन्न सामाजिक संगठनों, संस्थानों, जन-आंदोलनों व अभियानों की परस्पर एकता की जरूरत बढ़ गई है। अब यह पहले से और स्पष्ट है कि ऐसी किसी व्यापक एकता के अभाव में प्रयास दुनिया की बड़ी समस्याओं को सुलझाने में कोई असरदार भूमिका नहीं निभा सकेंगे। यह भी जरूरी है कि पर्यावरण, न्याय व अमन शांति के प्रमुख उद्देश्यों की व्यापक समझ बनाई जाए और उनके आपसी संबंधों को समझ कर समग्र सोच से कार्य किया जाए। जलवायु बदलाव को नियंत्रित करने के लिए जीवन-शैली में बदलाव जरूरी है। जीवन-मूल्यों में बदलाव भी जरूरी है। उपभोक्तावाद, विलासिता और नशे का विरोध जरूरी है। युद्ध और हथियारों की दौड़ तथा होड़ का विरोध जरूरी है। पर्यावरण पर अधिक बोझ डाले बिना सबकी जरूरतें पूरी करनी हैं, तो न्याय व साझेदारी की सोच जरूरी है, पर्यावरण को क्षति से बचाना है, तो आपसी भागीदारी से कार्य करना जरूरी है। जलवायु बदलाव नियंत्रण का सामाजिक पक्ष महवत्पूर्ण है। विश्व के अनेक बड़े मंचों से बार-बार कहा जा रहा है कि जलवायु बदलाव को समय रहते नियंत्रण करना जरूरी है। क्या मात्र कह देने से समस्या हल हो जाएगी। वास्तव में लोग तभी बड़ी संख्या में इसके लिए आगे आएंगे जब आम लोगों में, युवाओं व छात्रों में, किसानों व मजदूरों के बीच न्यायसंगत व असरदार समाधानों के लिए तीन-चार वर्ष तक धैर्य से, निरंतरता और प्रतिबद्धता से कार्य किया जाए। तकनीकी पक्ष के साथ इस सामाजिक पक्ष को समुचित महत्त्व देना जरूरी है। एक अन्य सवाल यह है कि क्या मौजूदा आर्थिक विकास और संवृद्धि के दायरे में जलवायु बदलाव जैसी गंभीर पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान हो सकता है? मौजूदा विकास की गंभीर विसंगतियां और विकृतियां ऐसी ही बनी रहीं तो क्या जलवायु बदलाव जैसी गंभीर पर्यावरणीय समस्याएं नियंत्रित हो सकेंगी। इस प्रश्न का उत्तर है 'नहीं'।

अब विषमता को दूर करना, विलासिता और अपव्यय को दूर करना, समता और न्याय को ध्यान में रखना, भावी पीढ़ी के हितों को ध्यान में रखना पहले से भी कहीं अधिक जरूरी हो गया है। सही और विस्तृत योजना बनाना इस कारण और जरूरी हो गया है कि ग्रीनहाऊस गैसों के उत्सर्जन को तेजी से कम करते हुए ही सब लोगों की बुनियादी जरूरतों को भी न्यायसंगत ढंग से और टिकाऊ तौर पर पूरा करना है। इससे ऐसे परिणाम मिल सकते हैं जो विश्व के लिए कल्याणकारी संदेश दे सकते हैं। उदाहरण के लिए, ऐसे किसी मॉडल के नियोजन से ऐसा संदेश मिलने की बहुत संभावना है कि युद्ध और हथियारों की होड़ को समाप्त किया जाए या न्यूनतम किया जाए।

अन्य संदेश यह मिलने की संभावना है कि जो बहुत वेस्टफुल उत्पादन और उपभोग हैं, उन्हें समाप्त या नियंत्रित किया जाए। इस तरह से स्थिति स्पष्ट होने से युद्ध, हथियारों और वेस्टफुल उत्पादन-उपभोग पर नियंत्रण के पक्ष में बड़ा जनमत बनेगा। यह अपने आप में बहुत उपयोगी होगा, पर्यावरण संरक्षण के लिए भी। इस तरह अमन-शांति और सभी लोगों की बुनियादी जरूरतें पूरी करने के कार्य साथ-साथ आगे बढ़ सकेंगे। यह विश्व के लिए कल्याणकारी होगा, इसके लिए जन-समर्थन भी प्राप्त हो सकेगा। पर्यावरण के प्रति समग्र द्रष्टिकोण अपनाने से इन सभी प्रक्रियाओं में बहुत सहायता मिलेगी।

Live हिन्दुस्तान .com

Date:12-08-21

तस्करी का सामान नहीं भावी पीढ़ी

कैलाश सत्यार्थी, (नोबेल शांति पुरस्कार से सम्मानित)

सीमा (बदला हुआ नाम) को महज 13 साल की उम्र में उनके गांव के कुछ लोगों द्वारा चुराकर दिल्ली की एक प्लेसमेंट एजेंसी में बेच दिया गया था। फिर प्लेसमेंट एजेंसी से एक दंपति ने उन्हें घरेलू कामगार के रूप में केवल 20,000 रुपये में खरीद लिया। लेकिन वहां से मजदूरी के नाम पर उनको एक रुपया भी नहीं मिला। इतना ही नहीं, नियोक्ताओं और ट्रैफिकर (तस्कर) द्वारा उनका बार-बार बलात्कार और शोषण किया जाता रहा। अपनी बेटी के लापता होने से निराश और घनघोर पीड़ा झेलने के बाद सीमा के मजदूर पिता हमारे पास आए। हमने सीमा को दिल्ली के एक घर में ढूंढ़ लिया। लेकिन, हमारे लिए यह हैरानी की बात थी कि गुलामी और शोषण से आजाद होने के बाद भी वह दुखी थीं और हमारे सामने नहीं आ रही थीं। पिता से मिलने के बजाय वह रोते हुए दीवार के पीछे छिप गईं। बहुत कुरेदने पर उन्होंने रोते हुए कहा, 'मैं पिता को अपना चेहरा नहीं दिखा सकती। मैं अब गंदी हो चुकी हूं। मैं खुद को मार डालना चाहती हूं।' यह सुनकर मेरा सिर शर्म से झुक गया।

यह केवल सीमा की कहानी नहीं है। यह हमारे समाज के सबसे गरीब, पिछड़े और हाशिये पर रहने वाले हजारों बच्चों और लड़कियों की कहानी है। दुनिया का कोई भी देश जब तक अपनी बेटियों की खरीद-फरोख्त को चुपचाप सहते जा रहा है, तब तक वह खुद को सभ्य नहीं कह सकता। किसी राष्ट्र की संपत्ति, शक्ति या प्रगति का कोई मतलब नहीं है, यदि उसके बच्चों को मध्ययुग की दास प्रथा की तरह जानवरों से भी कम कीमत में खरीदा और बेचा जाता है!

चार दशक पहले 1980 में जब हमने पंजाब के सरहिंद के एक ईंट भट्ठे से वर्षों से कैद वासल खान और उनकी मासूम साबो को बंधुआ मजदूरी व गुलामी से मुक्त कराकर अपना अभियान शुरू किया था, तभी हमें समझ में आ गया था कि बाल श्रम और ट्रैफिकिंग (मानव तस्करी) एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। बचपन बचाओ आंदोलन (बीबीए) सहित तमाम सिविल सोसायटी समूहों ने मानव व्यापार के इस खतरे को समाप्त करने हेतु एक मजबूत कानून के लिए दशकों से अभियान चला रखा है। वर्ष 2017 में सीमा और उनके जैसे बाल दासता से मुक्त हजारों बच्चों और युवाओं ने इस कानून की मांग को लेकर देश के कोने-कोने में सरकारों, न्यायपालिका, धर्मगुरुओं, कॉरपोरेट घरानों, छात्रों और सिविल सोसायटी के लोगों के साथ 'भारत यात्रा' में कदम से कदम मिलाकर मार्च किया। इस देशव्यापी यात्रा में 12 हजार किलोमीटर की दूरी तय की गई और 12 लाख से अधिक लोगों ने भाग लिया। सबकी जुबान पर एक ही मांग थी कि भारत को बच्चों की खरीद-फरोख्त और शोषण रोकने के लिए एक व्यापक मानव तस्करी विरोधी कानून पारित करना चाहिए। 'भारत यात्रा' में शामिल बाल दासता और मानव व्यापार से मुक्त बहादुर नौजवानों के मन को छू लेने वाले गीत अब भी मेरे कानों में गूंजते रहते हैं- बिकने को तैयार नहीं हम, लुटने को तैयार नहीं हम।

केंद्र सरकार ने व्यक्तियों की तस्करी (रोकथाम, देखभाल और पुनर्वास) विधेयक, 2021 प्रस्तावित किया है। इसे संसद को पारित करना है। बिल का उद्देश्य अपराध के सामाजिक और आर्थिक कारणों, तस्करों को सजा, पीड़ितों की सुरक्षा व

पुनर्वास सहित मानव व्यापार के सभी पहलुओं से निपटना है। यह एक व्यापक और मजबूत विधेयक है। कोविड-19 महामारी और इससे उपजी परिस्थितियों ने इस कानून की आवश्यकता को और ज्यादा बढ़ा दिया है। लंबे समय तक स्कूलों के बंद रहने और आर्थिक संकट के चलते देश के लाखों गरीब परिवारों के पास आजीविका का कोई साधन न रहने का फायदा तस्कर उठा रहे हैं। बीबीए के आंकडे बाल तस्करी बढ़ने के स्पष्ट संकेत दे रहे हैं। संगठन ने पहले लॉकडाउन से लेकर अब तक सरकारी एजेंसियों के सहयोग से 9,000 से भी ज्यादा बच्चों को मानव तस्करों से मुक्त कराया है। इसकी तुलना में महामारी से पहले 14 महीने की समान अवधि के दौरान करीब 4,700 बच्चों को मुक्त कराया गया था। ये आंकड़े स्थिति की गंभीरता का एहसास कराते हैं। इसीलिए यदि हमें महामारी के प्रभाव से उबरना है, तो इसके मानवीय पहलू को भी ध्यान में रखना होगा। इसलिए तस्करी विरोधी कानून को फौरन पारित कराने के साथ ही हमें बच्चों के लिए सालाना बजटीय आवंटन में भी वृद्धि करनी होगी।

मानव व्यापार अपने आप में एक संगठित अपराध है। लेकिन यह कई अन्य अपराधों को भी जन्म देता है। यह एक समानांतर काली कमाई वाली अर्थव्यवस्था को जन्म देता है, जो बाल श्रम, बाल विवाह, वेश्यावृत्ति, बंधुआ मजदूरी, जबरन भिक्षावृत्ति, नशीली दवाओं से संबंधित अपराध, भ्रष्टाचार, आतंकवाद और अन्य अवैध व्यवसायों को बढ़ावा देता है। हमारे संविधान निर्माताओं ने अस्पृश्यता के अलावा तस्करी के अपराध को भी भारत के संविधान के तहत दंडनीय बनाया। लिहाजा, एक मजबूत 'एंटी ट्रैफिकिंग' कानून हमारे निर्वाचित नेताओं की नैतिक और सांविधानिक जिम्मेदारी है और राष्ट्र-निर्माण और आर्थिक प्रगति की दिशा में एक आवश्यक कदम भी।

दरअसल, बच्चों की गरीबी, मजदूरी, अशिक्षा और सुरक्षा हमारी राजनीतिक और आर्थिक प्राथमिकताओं में नहीं रहे हैं। लेकिन, हमारे बच्चे अब और इंतजार नहीं कर सकते। अब समय आ गया है कि एक पूरी पीढ़ी को बचाने के लिए इस मुद्दे को राजनीति और विकास के केंद्र में लाया जाए। आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय में संतुलन बनाया जाए। भारत अपनी आजादी के 75वें वर्ष में प्रवेश कर रहा है, जिसे भारत सरकार अमृतोत्सव के रूप में मना रही है। इस अवसर पर भारतमाता के लिए उसके बच्चों की आजादी से बड़ा तोहफा भला और क्या हो सकता है? हमारे नीति-निर्माता बाल तस्करी के खिलाफ एक मजबूत कानून बनाकर हमारे बच्चों को आजादी, सुरक्षा व गरिमा का अमृत प्रदान कर सकते हैं।